राजस्थान की हिन्दी की पाठ्यपुस्तकें

हठधर्मिता, पितृसत्ता व युद्धोन्मादी राष्ट्रवाद की पोषक

देवयानी भारद्वाज

राजस्थान में राज्य शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान ने आनन-फानन में जो किताबें बनाईं उनमें हिंदी की किताबों से गुजरते हुए यह सवाल बार-बार मन में उठता है कि यह किताबें किस तरह की भावी पीढी के निर्माण की दिशा में प्रयत्नशील हैं। किताबों में दी गई विषय-वस्तु और उसे बरतने के अंदाज को देखते हुए जो तस्वीर उभरती है उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह किताबें युद्धोन्माद को बढ़ावा देती हैं, तर्क की बजाय हठधर्मिता को बढ़ावा देती हैं, मुख्यतः ब्राह्मणवादी और राजपूती पहचान की श्रेष्ठता को स्थापित करती हैं, हिन्दू राष्ट्रवाद के विचार को पोषित करती हैं, स्त्रियों का समाज में दोयम दर्जा सुनिश्चित करती हैं, स्त्री और पुरुषों को उनकी रूढ़ भूमिकाओं में कैद करती हैं, सामाजिक समरसता को कायम करने की बजाय विभेद को बढ़ावा देती हैं, अक्सर शहरी मध्यमवर्गीय सवर्ण पुरुष को संबोधित यह किताबें शेष सभी को अन्य की तरह देखती हैं।

अपने प्राक्कथन में इनका दावा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 को ध्यान में रखते हुए किताबों के निर्माण का है। किताबों के नजरिए को लेकर 'प्राक्कथन' और 'शिक्षकों से...' (यह शीर्षक भी अधूरा लगता है) जैस शीर्षकों के तहत कुछ दावे किए गए हैं। कक्षा 1 से 8 तक हिंदी की सभी किताबों के प्राक्कथन में कहा गया है, 'वर्तमान में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 तथा निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के द्वारा यह स्पष्ट है कि सभी शिक्षण क्रियाओं में 'विद्यार्थी' केंद्र के रूप में हैं।' इसी अनुच्छेद की आखिरी लाइन में कहा गया है, 'पाठ्यचर्या को सही रूप में पहुंचाने के लिए पाठ्यपुस्तक एक महत्वपूर्ण साधन है। अतः बदलती पाठ्यचर्या के अनुरूप ही पाठ्यपुस्तकों में परिवर्तन कर राज्य सरकार द्वारा नवीन पाठ्यपुस्तक तैयार कराई गई है।' इन पंक्तियों से स्पष्ट नहीं होता कि पाठ्यपुस्तक और पाठ्यचर्या के बीच संबंध को कैसे देखा गया है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 का जिक्र एक बार यह भ्रम पैदा करता है कि यह किताबें उन सैद्धांतिक आधारों से सहमत हैं जो इस दस्तावेज में उल्लिखित हैं, लेकिन जब किताबों को पलटते हैं तो वे सैद्धांतिक आधार कहीं नजर नहीं आते। ऐसे में यह संशय गहराने लगता है कि 'बदलती पाठ्यचर्या' से दरअसल आशय क्या है? राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 की मान्यताओं के साथ यदि सहमति है तो पाठ्यचर्या को बदले लंबा अरसा बीत चुका है। फिर यहां किस बदलती पाठ्यचर्या का जिक्र किया गया है? यदि कोई और पाठ्यचर्या है जो बदल रही है, तो उसको बदलने से पहले किताबों को बदलना कहां तक उचित है? यदि पाठ्यचर्या में बदलाव की कोई प्रक्रिया चल रही है तो वह क्या प्रदेश के स्तर पर अपनी पाठ्यचर्या निर्माण की प्रक्रिया है या केन्द्रीय स्तर पर इस तरह की कोई प्रक्रिया चल रही है? इन सवालों के फिलहाल कोई जवाब हमारे पास नहीं हैं। इसलिए हम फिलहाल राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 को ही आधार मानते हुए इन किताबों का विश्लेषण करने का प्रयास कर रहे हैं।

शिक्षा का स्वरूप कैसा होना चाहिए इस सन्दर्भ में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के दस्तावेज में, पांच निर्देशक सिद्धांतों का प्रस्ताव रखा हैः (1) ज्ञान को स्कूल के बाहर के जीवन से जोड़ना, (2) पढाई रटंत प्रणाली से मुक्त हो यह सुनिश्चित करना, (3) पाठ्यचर्या का इस तरह संवर्धन कि वह बच्चों को चहुंमुखी विकास के अवसर मुहैया करवाए बजाए इसके कि पाठ्यपुस्तक-केन्द्रित बन कर रह जाए, (4) परीक्षा को अपेक्षाकृत अधिक लचीला बनाना और कक्षा की गतिविधियों से जोड़ना, और (5) एक ऐसी अधिभावी पहचान का विकास जिसमें प्रजातांत्रिक राज्य-व्यवस्था के अंतर्गत राष्ट्रीय चिंताएं समाहित हों' (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005; पृ. 5-6)। दस्तावेज में कहा गया है, ''यह राष्ट्रीय पाठ्यचर्या दस्तावेज इस बात की सिफारिश करता है कि विषयों के बीच की दीवारें नीची कर दी जाएं ताकि बच्चों को ज्ञान का समग्र आनंद मिल सके और चीजों को समझने से मिलने वाली खुशी हासिल हो सके। साथ यह भी सुझाया गया है कि पाठ्यपुस्तक और दूसरी सामग्री की बहुलता हो, जिनमें स्थानीय ज्ञान और पारंपरिक कौशल शामिल हो सकते हैं और बच्चों के घर और सामुदायिक परिवेश से जीवंत संबंध बनाने वाले स्फूर्तिदायक स्कूली माहौल को सुनिश्चित किया जा सके।'' (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005; सार संक्षेप, पृ. IX) इन दावों के बावजूद किताब की आन्तरिक विषय-वस्तु में इतनी गंभीर असंगतियां पाठ्यपुस्तक निर्माण प्रक्रिया की मंशा पर ही संशय जगाती हैं और प्राक्कथन की भाषा गुमराह करने का प्रयास साबित होने लगती है।

युद्धोन्माद और हठधर्मिता

कक्षा एक की किताब पढ़ने-पढ़ाने के रूढ़ तरीकों की तरफ तो लौट ही जाती है, इस लौटने में वह जिन प्रतीकों का चयन करती है और उन्हें जिस तरह प्रस्तुत करती है वे इस बात की बानगी हैं कि आगे की कक्षाओं में इन किताबों की दिशा क्या होगी। पृष्ठ संख्या 80 पर 'क्ष' से 'क्षत्रिय' को दिखाते हुए कहा गया है, ''क्षत्रिय युद्ध में जाते हैं, दुश्मन को मार भगाते हैं''। इसी पृष्ठ पर एक अन्य चित्र है 'त्र' से 'त्रिशूल' का और उसकी खूबी कुछ इस प्रकार बताई गई है, ''त्रिशूल होता बड़ा भयंकर, धारण करते हैं शिव शंकर'', इसी तरह वर्णमाला के पंचमाक्षर जिनसे सामान्यतः कोई शब्द शुरू नहीं होता उनमें सिर्फ 'ण' को 'बाण' के चित्र के माध्यम से प्रदर्शित करते हुए किताब कहती है, ''बाण कभी न हाथ में रखना, संभाल कर तरकश में रखना'' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ. 73)। न सिर्फ यह शब्द बच्चे के परिवेश में शामिल नहीं हैं, उनके लिए अपरिचित हैं बल्कि यह सभी शब्द हिंसा की वाहक सामंती संस्कृति को बढ़ावा देते हैं। 'र' से ''रथ पर देखो हुए सवार, चले सैर को राजकुमार'' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ.15) का वर्तमान संदर्भ में क्या औचित्य हो सकता है जबकि अब न कोई राजा है न कोई राजकुमार।

कक्षा तीन में एक कहानी है 'साहसी बालिका' (हिन्दी, कक्षा-3, पृ. 64) जिसमें सात साल की एक लड़की, जिसके पिता का नाम नाना फडनवीस था। नाना फडनवीस देश की आजादी चाहते थे इसलिए अंग्रेजों ने उनके घर में आग लगा दी। लड़की ने भी अंग्रेजों से कहा कि वह देश की आजादी चाहती है तो अंग्रेज सैनिकों ने उसे आग में झोंक दिया। कक्षा तीन के बच्चों को देशभक्ति का यह कैसा पाठ यह किताब पढ़ाना चाहती है। यह किताबें जगह-जगह इस तरह की कहानियों के माध्यम से बच्चों के मन में एक अनजाने भय और अलग-अलग पहचान के लोगों के प्रति नफरत के बीज बोने का काम करती हैं। इसी तरह अनेक कहानियों में किसी अनजाने बादशाह का जिक्र है जिसने बच्चों के जुलूस पर गोलियां चलवा दी। जैसे छठी कक्षा में पाठ है 'गुलाब सिंह' (हिन्दी, कक्षा-6, पृ. 39-43)। कक्षा-5 में 'भारत के भरत' (पृ. 1), 'पन्ना का त्याग' (पृ. 69-75), कक्षा-6 में 'मुंडमाल' (पृ. 60-64), 'शहीद बकरी' (पृ. 71-74), कक्षा-7 में 'शरणागत की रक्षा' (पृ. 14-18) और कक्षा-8 में 'जैसलमेर की राजकुमारी' (पृ. 43-49), 'हुंकार की कलंगी' (पृ.89-94) के अलावा भी अनेक ऐसे पाठ शामिल हैं जो अंततः युद्ध के बहाने वीरता का बखान करते हैं। यह कहानियां या कविताएं युद्ध की विभीषिका, उसमें होने वाली जन-धन की हानि आदि के बारे में किसी तरह से संवाद की गुंजाइश नहीं खोलतीं बल्कि एक पक्ष को नायक और दूसरे को खलनायक के रूप में प्रस्तुत करती हैं।

युद्धोन्माद का विस्तार हठधर्मिता के रूप में अनेक पाठों में देखने को मिलता है। यहां तक कि ऐसी कहानियां जिनके पीछे नियोजित विद्रोह की कथाएं रही हैं वे भी इन किताबों में महज हठधर्मिता की कथा बनकर रह गई हैं, जैसे कक्षा 4 में कहानी 'गुरुभक्त काली बाई' (पृ. 66-72) अंग्रेजों के दमन के खिलाफ संगठित होते लोगों के असंतोष

और बगावत की कहानी है। लेकिन पाठ्यपुस्तक में यह गुरुभक्ति के लिए प्राण की बाजी लगा देने की कहानी में सीमित होकर रह जाती है। इसी तरह गुलाब सिंह एक कौमी जुलूस में झंडा उठाकर चलना चाहता है, लेकिन यह जुलूस किस मकसद के लिए है कहानी नहीं बताती। सिपाही गोली क्यूं चला देते हैं यह भी कहानी नहीं बताती (हिन्दी, कक्षा-6, पृ. 39-43)।

युद्ध और वीरता का यह उन्माद जगह-जगह दिए गए नीति वाक्यों में भी झलकता है जैसे कक्षा आठ की ही किताब में पृष्ठ 49 पर लिखा है ''वीर पुरुष रोग शैय्या पर मरने की अपेक्षा रण क्षेत्र में मरना पसंद करता है।'' इसी पृष्ठ पर दिया गया सवाल, ''राजस्थान की गौरव गाथा एवं पराक्रम की घटनाओं का पता लगा कर 'मेरा संकलन' में लिखिए।'', बच्चों के मन में प्रदेश की रूढ़ छवि और एकांगी दृष्टिकोण निर्मित करने का प्रयास करता है। किसी भी प्रदेश का इतिहास इस कदर एकांगी और एकरस नहीं होता। उसमें वीरता और शांति की ललक, कला और संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, पहनावे से जुड़े कई आयाम हो सकते हैं, जिन पर कक्षा आठ के छात्रों के साथ बात-चीत की जा सकती है। वैसे भी भाषा की किताब का काम यह है कि वह इस स्तर पर बच्चों को विविध प्रकार के साहित्य से परिचित कराए, उनके लेखन के कौशल को समृद्ध बनाने पर काम करे। ''प्राथमिक स्तर और उससे पूर्व की भाषा की पाठ्यपुस्तकें खासकर ज्यादा गंभीरता व संवेदना से लिखने की जरूरत है। इन्हें संदर्भपरक स्तर पर समृद्ध और सीखने वाले की रचनात्मकता को उचित चुनौती देने वाला होना चाहिए। इनमें केवल कविताएं व कहानियां नहीं, बल्कि विधाओं एवं विषयों के एक बड़े फलक को होना चाहिए। साथ ही ऐसे अभ्यास-प्रश्न भी होने चाहिए जिनमें अत्यंत सूक्ष्म अवलोकन व विश्लेषण की जरूरत पड़े और जो अंततः मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति के सौन्दर्यपरक संश्लेषण की ओर अग्रसर करें'' (भारतीय भाषाओं का शिक्षण, राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, पृ. 24)। लेकिन यह किताबें अपनी पूरी कोशिश खुद को युद्धोन्मादी बनाने में करती नजर आती हैं।

बहुत सारे पाठों की विषयवस्तु अपनी किसी जिद के लिए युद्ध को बुलावा देने की है। इतिहास हो सकता है कि इन गाथाओं का गवाह रहा हो, लेकिन भाषा की किताब में उन घटनाओं के समावेश का तार्किक आधार क्या है? पाठ इन घटनाओं पर किसी तरह के चिंतन को आमंत्रित करने कि बजाय युद्ध के प्रति आग्रह का महिमामंडन सा करते हुए जान पड़ते हैं। अपनी जिद के लिए युद्ध को यह किताबें बार-बार वीरता के पैमाने की तरह प्रस्तुत करती हैं। अधिकांशतः इन पाठों में युद्ध या हिंसा का आधार कथा नायक की जिद ही पाई गई है।

ब्राह्मणवाद, सामंतवाद और हिन्दू राष्ट्रवाद

कक्षा एक में जहां रथ, त्रिशूल, क्षत्रिय, बाण, ऋषि, ज्ञानी, दीदी, औरत आदि शब्दों और उनके सम्बन्ध में दी गई पंक्तियों से इनके रुझान का पता चलता है वहीं आगे कि कक्षाओं में यह रुझान विभिन्न कहानी-कविताओं से और अधिक मुखर होता चला गया है। कक्षा 2 से 8 तक सभी कक्षाओं में हिंदी की किताब में पहला पाठ देशभक्ति और प्रार्थना का मिला-जुला रूप है, जिसमें अकसर कथित भारत-माता या किसी अन्य प्रकार के चित्र के सामने बच्चे हाथ जोड़े या झंडा उठाए चल रहे हैं। कक्षा 2 में 'रक्षा बंधन' (पृ. 48-54), कक्षा 3 में 'अटल ध्रुव' (पृ. 83-90), कक्षा 4 में 'दशहरा' (पृ. 22-27), 'वीर बालक अभिमन्यु' (पृ. 32-37), कक्षा 5 में 'भारत के भरत' (पृ. 1), 'क्यों देते हैं नारियल की भेंट' (पृ. 15), 'अनोखी सूझ' (पृ. 20-24), 'बालक का स्वप्न' (पृ. 32-36), 'कामधेनु' (पृ. 45), 'पन्ना का त्याग' (पृ. 69-75), कक्षा 6 में 'हे मातृभूमि' (पृ. 1), 'भक्ति माधुरी' (पृ. 36-38), 'गुलाब सिंह' (पृ. 9-43), 'हमारा ऊंचा झंडा' (पृ. 44), 'तीर्थराज मचकुंड' (पृ. 45), 'मुंडमाल' (पृ. 60-64), 'योग और हमारा स्वास्थ्य' (पृ. 75-81), कक्षा 7 में 'सादर नमन' (पृ. 1), 'लव-कुश' (पृ. 4-9), 'इसे जगाओ' (पृ. 11-13), 'शरणागत की रक्षा' (पृ. 14-18), 'बेणेश्वर की यात्रा' (पृ.19), 'केवट का प्रेम' (पृ.43-45), 'भारत की मनस्विनी महिलाएं' (पृ. 62-68) और कक्षा 8 में 'समर्पण' (पृ. 1), 'हम करें राष्ट्र आराधन' (पृ. 4), 'सुदामाचरित' (पृ. 19-21), 'महाराणा प्रताप' (पृ. 24-27), 'संत कंवरा राम' (पृ. 28-32), 'गौ संरक्षण से ग्राम विकास' (पृ. 55-59) आदि पाठों के नामों से जाहिर है अधिकांश पाठ हिन्दू, ब्राह्मणवादी सोच, राजपूती ठसक, हिन्दू तीर्थ स्थल, हिन्दू त्यौहार आदि की विषयवस्तु अपने में समाहित किए हुए हैं। इनका विश्लेषण करते हैं तो यह प्रवृत्तियां पाठों में और गहरे तक पैठ जमाए मिलती हैं।

रूढ़भूमिका और पितृसत्ता

स्त्री के प्रति यह नजरिया कक्षा 1 में शुरू होता है जिसमें 'औ' से 'औरत' पढ़ाते हुए उसे ममता की मूरत बताया है 'औरत ममता की मूरत है, भोली-भाली सूरत है' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ. 68)। यह भोली-भाली सूरत, ममता की मूरत आगे चलकर इन कहानियों में त्याग, बलिदान की मूर्ति बनती जाती है। कक्षा 6 में आए पाठ 'गुलाब सिंह' (हिन्दी, कक्षा-6, पृ. 39-43), में शुरुआत में बहन और मां के प्रति प्रेम की बातें हैं और उनके बाद एक कौमी जुलूस में जब बहन भागीदारी करना चाहती है तो भाई उसे रोक देता है। वह बहन से राजकुमार की तरह तिलक करवा कर झंडा उठाकर चल पड़ता है। जुलूस का मकसद, बादशाह के अत्याचार के कोई आधार नहीं है, सिर्फ एक उन्माद-सा नजर आता है जिसके लिए भाई जुलूस और झंडा लेकर चल पड़ता है और उसी तरह के उन्माद के साथ उसे मार दिया जाता है। जब भाई मर जाता है तो वही झंडा बहन उठाकर चल पड़ती है। यानी प्राथमिक तौर पर भाई निकलता है, लेकिन यदि भाई को मार दिया गया है तो उसके मकसद को बहन आगे ले जाती है। वह न अपना निर्णय खुद ले सकती है न ही प्राथमिक तौर पर नेतृत्व उसका काम माना गया है। कहने को यह कहानी सुभद्रा कुमारी चौहान की है, लेकिन बड़े लेखकों की खराब रचनाओं का चयन इन किताबों की एक प्रमुख विशेषता नजर आती है। स्त्री पुरुष की अनुगामी है इसकी झलक जगह-जगह पर अभ्यास के प्रश्नों में भी मिलती है, उदाहरण के लिए, कक्षा 2 में पाठ 11 'शेर और चूहा' (पृ. 79) के साथ दिया गया अभ्यास का प्रश्न, ''जैसे आऊंगा से आऊंगी बना। इसी तरह आप भी नीचे दिए गए शब्दों से नए शब्द बनाएं खाऊंगा, चलूंगा, नाचूंगा, करूंगा...'', इससे बच्चों को यह समझ आता है कि भाषा में मूल क्रिया पुरुष-वाचक होती है और स्त्री-वाचक क्रियाएं उसी से निर्मित होती हैं।

स्त्री के प्रति इस नजरिए का वीभत्स उदाहरण देखने को मिलता है कक्षा 6 की किताब में दिए पाठ 'मुंडमाल' (पृ. 60-64) में। सरदार चुण्डावत, जो खुद उम्र में 18 वर्ष से कम हैं, युद्ध में जाने को तैयार खड़े हैं तभी झरोखे में खडी अपनी नवोढ़ा पत्नी पर नजर पड़ती है। ''हाडा वंश की सुलक्षणा, सुशीला और सुन्दर सुकुमारी कन्या'' (पृ. 60) यानि तमाम विशेषणों के बावजूद अब तक इस स्त्री का नाम नहीं बताया गया है। इसी तरह 'रूपनगर के राठौड़ वंश की राजकुमारी' (पृ. 61) का भी कोई नाम नहीं हैं। इस राजकुमारी की रक्षा के लिए जाने वाले सरदार चुण्डावत का अपनी रानी को देखकर चित्त चंचल हो रहा है। अंततः हाड़ी रानी अपना सर कलम कर सरदार को भेंट कर देती है ताकि सरदार उसके तुच्छ शरीर से ध्यान हटाकर युद्ध में ध्यान दे सकें। यह कहानी हर लिहाज से आपत्तिजनक है। इसमें व्यक्त भावनाएं छठी कक्षा के बच्चों की उम्र और समझ के स्तर के लिहाज से सर्वथा अनुपयुक्त हैं। इस पाठ में सतीत्व का महिमामंडन है जो सती कानून का खुला उल्लंघन है। इस विषयवस्तु को कक्षा 6 की किताब में शामिल करना पाठ्यचर्या में बताए गए शैक्षिक सिद्धांतों का उल्लंघन तो है ही साथ ही सती प्रथा का महिमामंडन व बाल विवाह को स्थापित करना भी है। यह विषयवस्तु स्त्री के प्रति रूढ़ धारणाओं को ही स्थापित नहीं करती बल्कि उसके प्रति हिंसा को भी बढ़ावा देती है। पाठ के अंत में चुण्ड़ावत रानी के कटे हुए शीश को गले में लटका कर युद्ध के लिए चल पड़ता है, यह दृश्य अत्यधिक वीभत्स दृश्य की रचना करता है। कक्षा छह के बच्चों के मस्तिष्क पर यह बिम्ब किस तरह का असर डालेगा, यह गंभीर चिंता का विषय होना चाहिए।

'जैसलमेर की राजकुमारी' पाठ में राजकुमारी कहती है ''मैं स्त्री हूं पर अबला नहीं हूं। मुझमें मर्दों जैसा साहस और हिम्मत है। मैं और मेरी सहेलियां देखने भर की स्त्रियां हैं।'' (हिन्दी, कक्षा-8, पृ. 43-49) यानि साहस और हिम्मत मूलतः मर्दों के गुण हैं, लेकिन जैसलमेर की राजकुमारी और उनकी सहेलियां देखने भर की स्त्रियां हैं, बाकी तो वे मर्दाने गुणों से युक्त हैं। एक तो इन किताबों में साहस सिर्फ युद्ध के क्षेत्र में काम आने वाला कोई गुण है, जीवन में और कहीं इनके अनुसार साहस की जरूरत नहीं होती। दूसरे यह मूलतः मर्दाना गुण है और जहां कोई-कोई स्त्री साहसी नजर आती है तो वह स्त्रियों में अपवाद स्वरूप ही है।

स्त्री के प्रति यही नजरिया कक्षा 7 के पाठ 13 'भारत की मनस्विनी महिलाएं' में भी स्त्री की इसी रूढ़ छवि को स्थापित करता है। दादाजी पत्र के माध्यम से अपनी पोती किरण को कहते हैं 'तुम मनस्विनी महिलाओं के बारे में जानोगी, तो उनके सद्गुण अनायास तुम्हारे मन में आ जाएंगे। तुम्हारे जीवन में उनके क्रमशः समावेश से तुम्हारे

उज्जवल भविष्य का पथ स्वतः प्रशस्त हो उठेगा।' (हिन्दी, कक्षा-7, पाठ 13, पृ. 62)। इन पंक्तियों में आए ''उनके सद्गुण अनायास तुम्हारे मन में आ जाएंगे'' वाक्यांश पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इसमें सीखने व समाजीकरण की एक धारणा छुपी है जो सीखने को उपदेश सुनने के बरक्स लाकर खड़ा कर देती है जबकि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा बाल-केन्द्रित शिक्षा-शास्त्र के बारे में सुझाव देते हुए कहती है, ''बाल-केन्द्रित शिक्षा-शास्त्र का अर्थ है बच्चों के अनुभवों, उनके स्वरों और उनकी सक्रिय सहभागिता को प्राथमिकता देना।'' (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, पृ. 15) इसी पृष्ठ पर आगे यह दस्तावेज कहता है, ''किताबी ज्ञान को दोहराने की क्षमता के विकास की बजाए पाठ्यचर्या बच्चों को इतना सक्षम बनाए कि वे अपनी आवाज ढूंढ़ सकें, अपनी उत्सुकता का पोषण कर सकें, स्वयं करें, सवाल पूछें, जांचें-परखें और अपने अनुभवों को स्कूली ज्ञान के साथ जोड़ सकें'' (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, पृ. 15)। किन्तु यह पाठ महिलाओं का अतिरेक पूर्ण महिमामंडन करते हुए कहता है ''त्याग, तपस्या, शौर्य, उदारता, भक्ति, वात्सल्य, जन्मभूमि प्रेम तथा आध्यात्म चिंतन से सुधि समाज के सम्मुख उच्चादर्श भी प्रस्तुत करती आ रही हैं।'' (हिन्दी, कक्षा-7, पाठ 13, पृ. 62), इसे आगे बढ़ाते हुए पाठ में आगे कहा गया है ''नारी ने ही पुरुष को गृहस्थ और किसान बनाया।'' (हिन्दी, कक्षा-7, पाठ 13, पृ. 63), इस तरह की भाषा द्वारा स्त्री का महिमामंडन करने के बहाने यह पाठ स्त्री की भूमिका को पुरुष के सापेक्ष स्थापित करता है और उसकी भूमिका को घर-परिवार की चार दीवारी में कैद और रूढ़ करता जाता है। इसका विस्तार पाठ में पुनः हिन्दु मिथकीय पात्रों को स्थापित करने के रूप में होता है। पाठ गौरी ('पार्वती, जिसने हिमाचल के घर में जन्म लिया और पति रूप में शिव की प्राप्ति के लिए घोर तप किया था। ...पार्वती नारी जाती का प्रतिनिधित्व करती है।'), सावित्री (''राजमहल के लाड़ प्यार में पली उस सुकुमारी ने ससुराल की मर्यादा की रक्षा के लिए किस प्रकार सहर्ष वन्य जीवन अपना लिया था।''), माता अनुसूया, माता मदालसा, गार्गी और मैत्रेयी, राजा दशरथ की रानी कैकेयी (''तुम जानते हो कैकेयी ने क्या किया। ...उसने कील के स्थान पर उंगली लगा दी। ...विजय राजा की हुई। तब उनका ध्यान गया कैकेयी की ओर, उसकी उंगली की ओर।''), सीता, (''ऐसी सुकुमारी, ऐसी कोमल परिस्थिति में पली-बढ़ी। किन्तु जब पति को वन जाना पड़ा तो भूल गई अपनी सुख-सुविधा और चल पड़ी तपस्विनी वेश में पति की सेवा के लिए ...अयोध्या आकर राम राजा बने तो सीता को वनवास दे दिया और सीता को कोई शिकायत नहीं, कोई प्रतिवाद नहीं! जो मर्जी पति परमेश्वार की, वही हो''), से होता हुआ रानी भवानी, अहल्याबाई, लक्ष्मी बाई, रामकृष्ण परमहंस की पत्नी शारदा मणि पर आकर रुक जाता है। स्त्री छवि को रूढ़ीबद्ध करने वाला और हिन्दू परंपरा को बढ़ावा देने वाला यह पाठ शिक्षा के उद्देश्यों, समावेशी शिक्षा और संविधान के मूल्यों के विरुद्ध नजर आता है। इन महिलाओं के संदर्भ में दादाजी का यह कहना, ''तुम मनस्विनी महिलाओं के बारे में जानोगी, तो उनके सद्गुण अनायास तुम्हारे मन में आ जाएंगे। तुम्हारे जीवन में उनके क्रमशः समावेश से तुम्हारे उज्जवल भविष्य का पथ स्वतः प्रशस्त हो उठेगा।'' (हिन्दी, कक्षा-7, पाठ 13, पृ. 62), इन किताबों को पढ़ने वाली बालिकाओं पर भी एक खास तरह की भूमिका को स्वीकारने का नैतिक दबाव बनाता हुआ नजर आता है, जो उनके समानता के मौलिक, संवैधानिक अधिकार का हनन है। पाठ के अंत में सूक्ति वाक्य है 'एक नारी की जिन्दगी वत्सलता का इतिहास है' (हिन्दी, कक्षा-7, पाठ 13, पृ. 68), यह पुनः उसी मूल्यबोध को स्थापित करता है।

रटंत प्रणाली को बढ़ावा

हिंदी भाषा की सभी किताबें 'प्राक्कथन' में यह भी कहती हैं कि ''सभी शिक्षण क्रियाओं में विद्यार्थी केंद्र के रूप में हों''। लेकिन जब किताबों को पलटना शुरू करते हैं तो उपरोक्त किसी भी निर्देशक सिद्धांत या मान्यता के साथ इन किताबों की संगति नजर नहीं आती। कक्षा 1 से 8 तक की सभी किताबें भाषा सीखने की रटंत प्रणाली को बढ़ावा देती हुई नजर आती हैं। भाषा सिखाने के किस नजरिए का पालन इन किताबों में किया गया है इसकी बानगी पहली कक्षा की किताब के कवर पेज से ही मिलने लगती है, जिसमें बच्चों के हाथ में उड़ते गुब्बारों पर वर्णमाला के विभिन्न अक्षर लिख कर छोड़ दिए गए हैं।

छोटे बच्चों को भाषा सिखाने में बातचीत, कविता और कहानी की भूमिका को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। इस किताब में कविता-कहानी के प्रति सलूक इस मान्यता के बिलकुल उलट नजर आता है। बिना किसी चित्र के एक

पृष्ठ पर एक साथ चार कविताएं दे दी गई हैं। यह कविताएं भी अपनी विषयवस्तु और भाषा शैली में बच्चों को आकर्षित कर सकें ऐसी नहीं हैं। चार में से दो कविताएं बच्चों को स्वच्छता का पाठ पढ़ाने लगती हैं। जैसे 'जंगल में नाचा है मोर/मेंढक बजा रहा है ढोल/गन्दा पानी मत तुम पीना/शंका में भी कभी न जीना।' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ. 2), इसी तरह एक अन्य कविता है 'हुआ सवेरा चिड़िया बोली/बच्चों ने तब आंखें खोलीं/अच्छे बच्चे मंजन करते/मंजन करके कुल्ला करते/कुल्ला करके मुंह को धोते/मुंह धोकर के रोज नहाते/रोज नहा कर खाना खाते/खाना खाकर पढ़ने जाते।'' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ. 2), आगे पांच पृष्ठों पर पशुओं, पक्षियों, फलों, सब्जियों और शरीर के अंगों के चित्र हैं (हिन्दी, कक्षा-1, पृ.4-8) और शिक्षक को निर्देश हैं कि वे इन चित्रों पर बात करें। किताब कहीं भी अवसर आने पर स्वच्छता की ओर ध्यान दिलाने से नहीं चूकती है। जैसे ''पक्षी पर्यावरण को स्वच्छ बनाते हैं'' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ. 4) या ''शरीर के अंगों के नाम, काम व स्वच्छता के बारे में बातचीत करें।'' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ. 8) ऐसा लगता है जैसे देश में स्वच्छता अभियान को संचालित करने का सारा दारोमदार प्राथमिक कक्षा की हिन्दी की किताबों पर ही आ गया है। क्योंकि शरीर के अंगों से संबंधित चित्रों के बाद अगला पाठ फिर कविता है ''आंख में अंजन/दांत में मंजन/नितकर, नितकर, नितकर...'' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ. 9), लगातार इस तरह की उपदेश परक विषयवस्तु एक विशिष्ट शहरी माध्यम वर्गीय नैतिकता का प्रदर्शन करती है, जिसमें बच्चों को अपने अनुभव और परिवेश के अनुरूप अंतर्क्रिया का कोई अवसर नहीं है।

भाषा सीखने के सैद्धांतिक आधार इस बात को प्रमाणित करते हैं कि कहानी बच्चों की रुचि को बनाए रखती है और भाषा सीखने में सहायक होती है। अनेक प्रयोग इस सिद्धांत को प्रमाणित कर चुके हैं। लेकिन कहानी को कक्षा एक के लिए किताब में जगह देने की भी जरुरत नहीं समझी गई। इस किताब में एक मात्र कहानी 'चित्र पठन' के रूप में दी गई है। एक पन्ने पर चार चित्रों के माध्यम से कहानी 'खट्टे अंगूर' (हिन्दी, कक्षा-1, पृ. 13) को दर्शाया गया है। एक पंक्ति के निर्देश में चित्रों पर बातचीत कर कहानी बनाने को कहा गया है। कक्षा 2 में इसी कहानी को एक चित्र के साथ दस पंक्तियों की कहानी के रूप में पेश कर दिया गया है (पृ. 13)। न पहली कक्षा के चित्र सुरुचिपूर्ण हैं और न दूसरी कक्षा में कहानी की भाषा सरस। पूरे एक साल के बाद उसी कहानी को देकर किताब किन शैक्षिक लक्ष्यों को पाना चाहती है?

पहली कक्षा में इसके बाद दो पृष्ठ पेन्सिल पकड़ने का अभ्यास करने के लिए सीधी-आड़ी रेखाएं और बुनयादी मोड़ के अभ्यास के लिए हैं (पृ. 10-11)। दो पृष्ठों पर अंगूठे वाले चित्रों के बाद पृष्ठ 15 से 83 तक एक पृष्ठ पर चार वर्ण, प्रत्येक वर्ण से शुरू होने वाला एक शब्द और दिए गए शब्द के बारे में दो पंक्तियां दी गई हैं। वर्ण पहचान के लिए किसी वर्ण का संबंध मात्र किसी एक शब्द से जोड़ देना पढ़ना-लिखना सीखने में किस तरह का गतिरोध खड़ा करता है तथा इस वर्ण व शब्द के संबंध को फिर अलग करने के लिए शिक्षकों को कैसे मशक्कत करनी पड़ती है उस विमर्श से लगता है यह किताबें पूरी तरह अनभिज्ञ हैं। पृष्ठ संख्या 85 पर 'अब तक सीखा हुआ' शीर्षक के तहत दी गई स्वर, मात्राओं, व्यंजन और संयुक्ताक्षर की सूची पहली कक्षा में भाषा शिक्षण के प्रति यदि किताब के नजरिए को लेकर कोई संशय हो तो उसे भी दूर कर देती है। वर्ण पहचान के लिए चुने गए शब्दों का बच्चों के परिवेश, उनके अनुभव संसार के साथ कोई सम्बन्ध है या नहीं इसके प्रति भी यह किताबें पूरी तरह बेपरवाह नजर आती हैं।

कुल मिलाकर यह किताबें बच्चों को विवेकवान, कल्पनाशील और तर्कशील व्यक्ति की बजाए रट्टू तोते व सिर झुका आज्ञा का पालन करने वाले और चिंतन में अक्षम व्यक्ति के तौर पर करती नजर आती हैं। ◆

संदर्भ

1. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, रा. शै. अनु. प्र.प., 2006

2. भारतीय भाषाओं का शिक्षण, राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, रा. शै. अनु. प्र.प., 2006

लेखिका परिचय : लगभग 10 वर्ष तक पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्य किया, उसके बाद 4 वर्ष तक शिक्षा एवं महिलाओं से जुड़े विभिन्न मुद्दों को लेकर स्वतंत्र रूप से कार्य किया और लगभग 4 वर्ष तक दिगन्तर, जयपुर से जुड़ी रहीं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, राजस्थान में भाषा की संदर्भ व्यक्ति के तौर पर कार्यरत हैं।